

तिहाड़ जेल

लेखक: डॉ. किरण बेदी

बुक्बॉक्स के लिए रूपान्तरण: अनन्या पार्थिवन

अंधेरे गलियारे में जेल के वॉर्डन साहब मेरे आगे-आगे चल रहे थे। दीवारों के साथ लगी खुली नालियों की बदबू से मेरा दम, घुटा जा रहा था। जल्द ही हम खुले मैदान में आ पहुंचे, जहां धारीदार कपड़े पहने सैंकड़ों लोग खड़े थे। सभी हैरानी से मुझे देख रहे थे। सन्नाटे को तोड़ते हुए वॉर्डन ने ऊंची आवाज़ में आदेश दिया।

ये थी तिहाड़ जेल, जहां दो हजार पांच सौ कैदियों की जगह थी, वहां दस हजार से भी ज्यादा से भी ज्यादा लोगों को ठूस कर रखा गया था। मैंने मन ही मन सोचा कि अगर धरती पर कहीं नरक है तो शायद यहीं है। और तब मेरी समझ में आया कि मुझे दिल्ली की बदनाम तिहाड़ जेल का इन्स्पेक्टर जनरल या आईजी क्यों बनाया गया है।

कैदियों की हालत सुधारने के लिए, मुझे कुछ करना होगा। मैं जानती थी कि ये मेरे जीवन की सबसे बड़ी चुनौती होगी। मैं रोज़ कैदियों से मिलने जाने लगी। मुझे बताया गया था कि मुझसे पहले के इन्स्पेक्टर जनरल कभी भी जेल के अंदर नहीं आते थे। शुरू में कैदी मेरे चारों ओर जमा तो हो जाते थे, लेकिन वॉर्डनों के डर से, बोलते बहुत कम थे। मैं कैदियों के समूहों के साथ बैठती और उनकी समस्याओं के बारे में बातचीत करती। मैं जानती थी कि सफ़ाई की व्यवस्था और जेल की हालत सुधारने के अलावा मुझे कैदियों को काम में व्यस्त रखना होगा, ताकि वे फालतू के लड़ाई-झगड़ों में न पड़ें।



BookBox

www.bookbox.com

© BookBox. All Rights Reserved.

मैंने उनके लिए जेल में ही कुछ सरल, लेकिन असरदार उपायों की शुरुआत की। जैसे सैर करना, खेलों के आयोजन, गीत संगीत और अभिनय वगैरह। जल्दी ही मैंने भरोसेमंद अधिकारियों का एक समूह तैयार कर लिया, जो इन कामों में मेरी सहायता करता था।

हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या थी, धर्म के आधार पर बने गुट, और उनकी आपसी दुश्मनियां। इस समस्या को खत्म करने के लिए हमने सभी धर्मों के त्यौहार जैसे, राखी, होली, ईद और क्रिसमस मिलजुल कर मनाने शुरू कर दिए। इससे कैदियों को एक-दूसरे के धार्मिक रीति-रिवाजों को समझने में सहायता मिली। और यही नहीं वो इनमें हिस्सा लेकर खुशी भी महसूस करने लगे।

मैंने कैदियों के लिए, बहुत सारी किताबों की भी व्यवस्था करवाई। इसके बाद तो कई यूनिवर्सिटीस ने कैदियों के लिए विशेष कोर्स भी चलाए। हमने ध्यान लगाने का अभ्यास भी शुरू करवाया ताकि वो बेहतर तरीके से सोच-विचार कर सकें और सज़ा पूरी होने के बाद अपने जीवन को फिर से शुरू करने की योजनाएं बना सकें।

१९९३ और ९५ के बीच मैं तिहाड़ जेल में तैनात रही। ये दो वर्ष मेरे जीवन के सबसे कामयाब वर्ष थे।

हमेशा की तरह आखिरी दिन भी मैंने जेल का दौरा किया। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं जेल में नहीं, किसी ऋषि के आश्रम में हूं। सैकड़ों अपराधी, जिन्होंने भयंकर अपराध किए थे, ध्यान लगाए बैठे थे। हरे-भरे मैदानों में धूप बिखरी थी। जेलवासी या तो परीक्षा की तैयारियों में जुटे थे या फिर कोई ऐसी कारीगरी सीख रहे थे जिसमें उनकी रुचि थी।

समाप्त



Click below to follow us:



You Tube

facebook

BookBox

www.bookbox.com

© BookBox. All Rights Reserved.